[2020] 1 एस.सी.आर. 749

विद्या देवी

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य।

(2020 की सिविल अपील संख्या 60-61)

08 जनवरी 2020

[इंदु मल्होत्रा और अजय रस्तोगी, जे.जे.]

भारत का संविधान - अनु. 31, 136, 142 और 300ए - प्रतिवादी-राज्य ने 1967-68 में नादौन-सुजानपुर रोड के निर्माण के लिए, अधिग्रहण की कार्यवाही का सहारा लिए बिना या कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना, अपीलकर्ता की भूमि पर कब्जा कर लिया - सड़क का निर्माण 1975 तक पूरा हुआ - 2004 में, कुछ समान स्थिति वाले व्यक्तियों, जिनकी भूमि भी उसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए प्रतिवादी द्वारा कब्जा कर ली गई थी, अनख सिंह और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य शीर्षक से रिट याचिका दायर की । मुआवज़े का दावा करना - अनुमति है - प्रतिवादी ने 1894 अधिनियम के तहत अधिग्रहण की कार्यवाही केवल रिट याचिकाकर्ताओं की भूमि के संबंध में शुरू की, न कि अन्य भूमि-मालिकों के संबंध में जिनकी भूमि भी कब्जा कर ली गई थी - अपीलकर्ता ने अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रार्थना करते हुए रिट याचिका दायर की कि राज्य को मुआवजा देने का निर्देश दिया जाए। 1967-68 में अधिग्रहित भूमि के लिए - उच्च न्यायालय ने माना कि इस मामले में कानून और तथ्य के विवादित प्रश्न शामिल थे, जिन पर रिट कार्यवाही में निर्णय नहीं लिया जा सकता था, हालांकि अपीलकर्ता को मुकदमा दायर करने की स्वतंत्रता दी गई - समीक्षा याचिका खारिज कर दी गई - अपील पर, आयोजित किया गया: वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता एक अशिक्षित व्यक्ति है, ग्रामीण क्षेत्र से आने वाली एक विधवा से 1967 में उसकी संपत्ति जबरन छीन ली गई थी, जब संपत्ति का अधिकार मौलिक अधिकार था (हालांकि 1978 के संशोधन अधिनियम

द्वारा ऐसा होना बंद हो गया) जिसकी गारंटी संविधान के भाग III में अनु.31 द्वारा दी गई थी - कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना, किसी व्यक्ति को उसकी निजी संपत्ति से जबरन बेदखल करना, मानव अधिकार का उल्लंघन होगा, साथ ही अनुच्छेद 300 ए के तहत संवैधानिक अधिकार का भी उल्लंघन होगा - कार्रवाई का कारण एक है एक को जारी रखते हुए, चूंकि अपीलकर्ता को 1967 में बिना किसी कानूनी मंजूरी के उसकी संपत्ति से अनिवार्य रूप से ज़ब्त कर लिया गया था - अनु. 136 और 142 के तहत असाधारण क्षेत्राधिकार के मद्देनजर, राज्य को निर्देश दिया जाता है कि वह अपीलकर्ता को उन्हीं शर्तों पर मुआवजा दे, जैसा संदर्भ न्यायालय ने आदेश दिनांक 07.07.15 द्वारा अनख सिंह के मामले में 8 सप्ताह के भीतर सोलेटियम, ब्याज इत्यादि सहित सभी वैधानिक लाभ, इसे डीम्ड अधिग्रहण का मामला मानते हुए दिया था - 10 सप्ताह के भीतर सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष राज्य द्वारा अनुपालन का शपथ पत्र दायर किया जाना चाहिए - यदि अपील दायर की जाती है राज्य द्वारा मुआवजे के भुगतान की तारीख से 8 सप्ताह के भीतर अपीलकर्ता द्वारा, अपील को सीमा के भीतर माना जाएगा, और कानून के अनुसार अपनी योग्यता के आधार पर निर्णय लिया जाएगा- राज्य को कानूनी लागत और रुपये का खर्च देना होगा। अपीलकर्ता को 1,00,0000/- - उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को रद्द किया गया - भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 - संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 - प्रतिकूल कब्जे का सिद्धांत।

सिद्धांत/सिद्धांत - प्रतिकूल कब्जे का सिद्धांत - नादौन-सुजानपुर रोड के निर्माण के लिए 1967-68 में प्रतिवादी-राज्य द्वारा अपीलकर्ता की भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही का सहारा लिए बिना या कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना कब्जा कर ली गई - राज्य द्वारा प्रतिकूल कब्जे की याचिका - माना गया: राज्य एक कल्याणकारी राज्य है, उसे प्रतिकूल कब्जे की दलील देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जो एक अतिक्रमी यानी किसी अपकृत्य या यहां तक कि अपराध के दोषी व्यक्ति को 12 वर्षों से अधिक समय तक ऐसी संपत्ति पर कानूनी अधिकार प्राप्त करने की अनुमति देता है - राज्य को अपने ही नागरिकों की संपत्ति हड़पने के

लिए प्रतिकूल कब्जे के सिद्धांत को लागू करके भूमि पर अपना अधिकार सही करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जैसा कि वर्तमान मामले में किया गया है।

भारत का संविधान - अनु.136, 142 और 226 - अपीलकर्ता (एक अनपढ़ व्यक्ति, ग्रामीण क्षेत्र की विधवा) की भूमि 1967-68 में नादौन-सुजानपुर रोड के निर्माण के लिए प्रतिवादी-राज्य द्वारा बिना सहारा लिए ले ली गई थी। अधिग्रहण की कार्यवाही या कानून की उचित प्रक्रिया का पालन करने के लिए - अपीलकर्ता ने 2010 में उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया - राज्य ने अपीलकर्ता द्वारा अदालत में जाने में देरी और देरी की दलील दी - माना: खारिज कर दिया गया - जारी रहने के मामले में देरी और देरी का मुद्दा नहीं उठाया जा सकता है कार्रवाई का कारण, या यदि परिस्थितियाँ न्यायालय की न्यायिक अंतरात्मा को झकझोर देती हैं - देरी की माफ़ी न्यायिक विवेक का मामला है, जिसका प्रयोग किसी मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में विवेकपूर्ण और यथोचित रूप से किया जाना चाहिए - यह मौलिक उल्लंघन पर निर्भर करेगा अधिकार, और दावा किए गए उपाय और देरी कब और कैसे हुई - पर्याप्त न्याय करने के लिए अपने संवैधानिक अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने के लिए अदालतों के लिए कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं है।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए

माना गया: 1.1 अपीलकर्ता से 1967 में उसकी संपत्ति जबरन छीन ली गई थी, जब संपत्ति का अधिकार संविधान के भाग III में अनुच्छेद 31 द्वारा गारंटीकृत एक मौलिक अधिकार था। अनुच्छेद 31 निजी संपत्ति के अधिकार की गारंटी देता है, जिसे कानून की उचित प्रक्रिया और उचित मुआवजे के बिना वंचित नहीं किया जा सकता है। कानूनी प्रक्रिया का पालन किए बिना किसी व्यक्ति को उसकी निजी संपत्ति से जबरन बेदखल करना मानवाधिकार का उल्लंघन होगा, साथ ही संविधान के अनुच्छेद 300 ए के तहत संवैधानिक अधिकार का भी उल्लंघन होगा। [पैरा 10.1 और 10.2]

पश्चिम बंगाल राज्य बनाम सुबोध गोपाल बोस और अन्य **एआईआर 1954 एससी 92: [1954] एससीआर 587**; *के टी प्लांटेशन प्रा. लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य* **(2011) 9 एससीसी 1: [2011] 13 एससीआर 636 - अनुसरण किया गया।**

तुकाराम काना जोशी एवं अन्य बनाम एम.आई.डी.सी. एवं अन्य. **(2013) 1 एससीसी 353 : [2012] 13 एससीआर 29**; *हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम डेरियस शापुर चेनाई* **(2005) 7 एससीसी 627: [2005] 3 सप्ल. एससीआर 388**; *एन. पद्मम्मा बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी* **(2008) 15 एससीसी 517: [2008] 9 एससीआर 535**; *दिल्ली एयरटेक सर्विसेज प्रा. लिमिटेड एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य.* **(2011) 9 एससीसी 354 : [2012] 12 एससीआर 191**; *जिलुभाई नानभाई खाचर बनाम गुजरात राज्य* **(1995) सप्ल. 1 एससीसी 596 : [1994] 1 सप्ल. एससीआर 807 - पर निर्भर।**

1.2 अपीलकर्ता को बिना किसी कानूनी मंजूरी के, और कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना उसकी संपत्ति से जबरन बेदखल नहीं किया जा सकता था, और उसे उचित मुआवजे के भुगतान से वंचित नहीं किया जा सकता था, जो कि 1967 में जबरन बेदखली की तारीख पर एक मौलिक अधिकार था। राज्य द्वारा अपीलकर्ता को उसकी संपत्ति से अनिवार्य रूप से वंचित करने में अधिकार और कानूनी मंजूरी का पूर्ण अभाव है। कानून के शासन द्वारा शासित लोकतांत्रिक राजनीति में, राज्य कानून की मंजूरी के बिना किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से वंचित नहीं कर सकता था। [पैरा 10.3-10.5]

हरियाणा राज्य बनाम मुकेश कुमार **(2011) 10 एससीसी 404: [2011] 14 एससीआर 211**; *पी.एस. सदाशिवस्वामी बनाम टी.एन. राज्य* **(1975) 1 एससीसी 152 : [1975] 2 एससीआर 356 - पर निर्भर।**

1.3 राज्य एक कल्याणकारी राज्य है, उसे प्रतिकूल कब्जे की दलील देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जो एक अतिचारी यानी किसी अपकृत्य, या यहां तक कि अपराध के दोषी व्यक्ति को 12 वर्षों से अधिक समय तक ऐसी संपत्ति पर कानूनी अधिकार प्राप्त करने की अनुमति देता है। राज्य को अपने ही नागरिकों की संपत्ति हड़पने के लिए प्रतिकूल कब्जे के सिद्धांत को लागू करके भूमि पर अपना अधिकार पूरा करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जैसा कि वर्तमान मामले में किया गया है। अपीलकर्ता द्वारा अदालत में जाने में देरी और लापरवाही के बारे में राज्य द्वारा दिया गया तर्क भी खारिज किया जा सकता है। कार्रवाई के निरंतर कारण के मामले में, या यदि परिस्थितियाँ न्यायालय की न्यायिक अंतरात्मा को झकझोर देती हैं, तो देरी और विलंब को नहीं उठाया जा सकता है। देरी की माफ़ी न्यायिक विवेक का मामला है, जिसका प्रयोग किसी मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में विवेकपूर्ण और उचित तरीके से किया जाना चाहिए। यह मौलिक अधिकारों के उल्लंघन, और दावा किए गए उपाय और देरी कब और कैसे हुई, इस पर निर्भर करेगा। पर्याप्त न्याय करने के लिए अपने संवैधानिक अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने के लिए अदालतों के लिए कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं है। [पैरा 10.6, 10.7]

1.4 अपीलकर्ता एक अनपढ़ व्यक्ति है, जो एक ग्रामीण क्षेत्र से आने वाली विधवा है, उसे कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का सहारा लिए बिना राज्य द्वारा उसकी निजी संपत्ति से वंचित कर दिया गया है। अपीलकर्ता को आधी सदी से अधिक समय तक कोई भी मुआवजा दिए बिना उसकी संपत्ति का अधिकार छीन लिया गया है। वर्तमान मामले में कार्रवाई का कारण जारी है, क्योंकि अपीलकर्ता को 1967 में कानूनी मंजूरी या कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना उसकी संपत्ति से अनिवार्य रूप से ज़ब्त कर लिया गया था। वर्तमान मामला ऐसा है जहां न्याय की मांग इतनी बाध्यकारी है क्योंकि राज्य ने स्वीकार किया है कि अधिग्रहण की कार्यवाही, या कानून द्वारा ज्ञात किसी भी प्रक्रिया को शुरू किए बिना भूमि पर कब्जा कर लिया गया था। संविधान के अनुच्छेद 136 और 142 के तहत असाधारण क्षेत्राधिकार का प्रयोग

किया जाता है, और राज्य को अपीलकर्ता को मुआवजा देने का निर्देश दिया जाता है। प्रतिवादी-राज्य को सभी वैधानिक लाभों के साथ, *अनख सिंह* संदर्भ के मामले में दिनांक 07.07.2015 के आदेश के *तहत* न्यायालय द्वारा दिए गए मुआवजे का भुगतान करने का निर्देश दिया गया है (यानी 2011 आरबीटी संख्या 01/13 की भूमि संदर्भ संख्या 1) इसे डीम्ड अधिग्रहण का मामला मानते हुए 8 सप्ताह की अवधि के भीतर सोलेटियम, ब्याज आदि शामिल करें। राज्य को 10 सप्ताह के भीतर इस न्यायालय के समक्ष अनुपालन का एक शपथ पत्र दाखिल करने का निर्देश दिया गया है। यह सूचित किया गया है कि रविंदर सिंह पुत्र अनख सिंह और अन्य द्वारा एक अपील दायर की गई है 2016 का आरएफए नंबर 35 जो शिमला में हिमाचल प्रदेश के उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित है। इसे ध्यान में रखते हुए, यदि वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा राज्य द्वारा मुआवजे के भुगतान की तारीख से 8 सप्ताह के भीतर अपील दायर की जाती है, तो अपील को सीमा के भीतर माना जाएगा, और कानून के अनुसार अपने गुणों के आधार पर निर्णय लिया जाएगा। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 11.09.13 एवं 13.05.14 को निरस्त किया जाता है। [पैरा 11,13-14]

<u>केस कानून संदर्भ</u>

[1954] एससीआर 587	पालन किया	पैरा 10.1
[2012] 13 एससीआर 29	पर निर्भर	पैरा 10.1
[2011] 13 एससीआर 636	पालन किया	पैरा 1.01
[2005] 3 सप्ल. एससीआर 388	पर निर्भर	पैरा 10.2
[2008] 9 एससीआर 535	पर निर्भर	पैरा 10.2
[2012] 12 एससीआर 191	पर निर्भर	पैरा 10.2
[1994] 1 सप्ल. एससीआर 807	पर निर्भर	पैरा 10.2
[2011] 14 एससीआर 211	पर निर्भर	पैरा 1.05
[1975] 2 एससीआर 356	पर निर्भर	पैरा 10.5

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2020 की सिविल अपील संख्या 60-61।

2010-बी के सीडब्ल्यूपी संख्या 1736 में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय, शिमला के दिनांक 11.09.2013 के निर्णय और आदेश से और 2014 की समीक्षा याचिका संख्या 50 में दिनांक 13.05.2014 के आदेश से।

सुश्री राधिका गौतम, सलाहकार। अपीलकर्ता के लिए.

अभिनव मुखर्जी, एएजी, सुश्री बिहू शर्मा, सुश्री प्रतिष्ठा विज, समर्थ खन्ना, सलाहकार। उत्तरदाताओं के लिए

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

इंदु मल्होत्रा, जे.

विलंब क्षमा किया गया. अनुमति दी गई.

1. अपीलकर्ता अब लगभग 80 वर्ष का हो चुका है, वह निर्विवाद रूप से टीका जलारी भद्दिरैन, मौजा जलारी, तहसील नादौन, जिला हमीपुर, हिमाचल प्रदेश में खाता/खतौनी नंबर 105 मिन/127, खसरा नंबर 70 में शामिल लगभग 3.34 हेक्टेयर भूमि का मालिक था।

2. प्रतिवादी-राज्य ने 1967-68 में एक प्रमुख जिला सड़क, नादौन-सुजानपुर रोड, के निर्माण के लिए अधिग्रहण की कार्यवाही का सहारा लिए बिना, या कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना अपीलकर्ता की भूमि पर कब्जा कर लिया।

सड़क का निर्माण 1975 तक पूरा हो गया।

3. अपीलकर्ता, ग्रामीण पृष्ठभूमि से आने वाली, एक अनपढ़ विधवा होने के नाते, कानून में अपने अधिकारों और हकदारी से पूरी तरह से अनभिज्ञ थी, और उसने राज्य द्वारा अनिवार्य रूप से ली गई भूमि के मुआवजे के लिए कोई कार्यवाही दायर नहीं की।

4. 2004 में, कुछ समान स्थिति वाले व्यक्तियों, जिनकी भूमि भी प्रतिवादी-राज्य द्वारा उसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए ले ली गई थी, ने *अनख सिंह और अन्य बनाम*

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य शीर्षक से 2004 का सीडब्ल्यूपी नंबर 1192 हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष मुआवजे का दावा के लिए दायर किया। ।

उच्च न्यायालय ने दिनांक 23.04.2007 के आदेश के तहत, 2004 के सीडब्ल्यूपी संख्या 1192 को अनुमति दी, और प्रतिवादी-राज्य को भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 के तहत रिट याचिकाकर्ताओं की भूमि का अधिग्रहण करने का निर्देश दिया।

5. 2008 में उच्च न्यायालय के आदेश के अनुसार, प्रतिवादी-राज्य ने भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 के तहत केवल रिट याचिकाकर्ताओं की भूमि के संबंध में अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू की, न कि अन्य भूमि-मालिकों की, जिनकी भूमि भी जब्त कर ली गई थी। हावी हो गया।

6. अपीलकर्ता का कहना है कि उसे इन कार्यवाही के बारे में 2010 में पता चला, जब उसने अपनी दो बेटियों के साथ सी.डब्ल्यू.पी. 2010 की संख्या 1736 हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की जिसमें प्रार्थना की गई कि राज्य को 1967-68 में अधिग्रहीत भूमि के लिए मुआवजा देने का निर्देश दिया जाए; या, वैकल्पिक रूप से, राज्य को भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 के तहत अधिग्रहण कार्यवाही शुरू करने का निर्देश दें।

प्रतिवादी-राज्य ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपना जवाब दाखिल किया, जिसमें यह स्वीकार किया गया कि विभाग ने 1967-68 में एक प्रमुख जिला सड़क, नादौन-सुजानपुर सड़क के निर्माण के लिए अपीलकर्ता के स्वामित्व वाली भूमि का उपयोग किया था। राज्य 1967-68 से, यानी, पिछले 42 वर्षों से संपत्ति पर लगातार कब्ज़ा कर रहा था, और प्रतिवादी-राज्य का शीर्षक "प्रतिकूल कब्जे" में परिवर्तित हो गया। यह प्रस्तुत किया गया कि अपीलकर्ता के लिए उपलब्ध वैधानिक उपाय सिविल मुकदमा दायर करना था।

राज्य ने आगे स्वीकार किया है कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 के तहत एक अधिसूचना 2008 में पड़ोसी भूमि-मालिक अनख सिंह की भूमि के संबंध में जारी की गई थी, जिसकी भूमि भी इसी उद्देश्य के लिए ली गई थी। इसके अलावा, रिट याचिका पर रोक

लगा दी गई थी, क्योंकि सड़क का निर्माण 1967-68 में किया गया था, और 1975 से पक्कीकरण किया गया था। अपीलकर्ता और उसके पूर्ववर्ती हितधारकों द्वारा भूमि के लिए मौखिक रूप से सहमति देने के बाद भूमि का उपयोग प्रतिवादी-राज्य द्वारा किया गया था, बिना किसी आपत्ति के कब्ज़ा किया जा रहा है।

7. उच्च न्यायालय ने दिनांक 11.09.2013 के *आक्षेपित* निर्णय और आदेश के माध्यम से माना कि इस मामले में सीमा के शुरुआती बिंदु पर निर्धारण के लिए कानून और तथ्य के विवादित प्रश्न शामिल हैं, जिन्हें रिट कार्यवाही में तय नहीं किया जा सकता है। अपीलकर्ता को सिविल मुकदमा दायर करने की स्वतंत्रता दी गई।

8. व्यथित होकर, अपीलकर्ता ने निर्णय और आदेश दिनांक 11.09.2013 के खिलाफ एक समीक्षा याचिका दायर की, जिसे आदेश दिनांक 13.05.2014 द्वारा खारिज कर दिया गया।

9. अपीलकर्ता ने रिट याचिका में पारित दिनांक 11.09.2013 के फैसले और समीक्षा याचिका में पारित दिनांक 13.05.2014 के आदेश को चुनौती देने के लिए इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान अपील दायर की है।

10. हमने पक्षों के विद्वान वकीलों को सुना है और रिकॉर्ड का अवलोकन किया है।

10.1. अपीलकर्ता से 1967 में उसकी संपत्ति जबरन छीन ली गई थी, जबकि संपत्ति का अधिकार संविधान के भाग III में अनुच्छेद 31 द्वारा गारंटीकृत एक मौलिक अधिकार था।

अनुच्छेद 31 निजी संपत्ति के अधिकार की गारंटी देता है, जिसे कानून की उचित प्रक्रिया और उचित मुआवजे के बिना वंचित नहीं किया जा सकता है।

10.2. संविधान (चवालीसवाँ संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा संपत्ति का अधिकार एक मौलिक अधिकार नहीं रहा, हालाँकि, यह एक कल्याणकारी राज्य में एक मानवाधिकार और संविधान के अनुच्छेद 300 ए के तहत एक संवैधानिक अधिकार बना रहा। अनुच्छेद 300 ए में प्रावधान है कि कानून के अधिकार के अलावा किसी भी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से

वंचित नहीं किया जाएगा। राज्य कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अलावा किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से बेदखल नहीं कर सकता। मुआवज़ा देने की बाध्यता, हालांकि अनुच्छेद 300 ए में स्पष्ट रूप से शामिल नहीं है, उस अनुच्छेद में अनुमान लगाया जा सकता है।

कानूनी प्रक्रिया का पालन किए बिना किसी व्यक्ति को उसकी निजी संपत्ति से जबरन बेदखल करना मानवाधिकार का उल्लंघन होगा, साथ ही संविधान के अनुच्छेद 300 ए के तहत संवैधानिक अधिकार का भी उल्लंघन होगा।

हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम डेरियस शापुर चेनाई के फैसले पर भरोसा किया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने कहा था कि:

> *"6. ...संविधान के अनुच्छेद 300-ए में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, राज्य "प्रख्यात डोमेन" की अपनी शक्ति का प्रयोग करके किसी व्यक्ति की संपत्ति के अधिकार में हस्तक्षेप कर सकता है, लेकिन यह जनता के उद्देश्य के लिए होना चाहिए और उसके लिए उचित मुआवजे का भुगतान किया जाना चाहिए।"*

(जोर दिया गया)

एन. पद्मम्मा बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी में, इस न्यायालय ने कहा कि:

> *"21. यदि संपत्ति का अधिकार एक मानवीय अधिकार है और संवैधानिक अधिकार भी है, तो इसे कानून के अनुसार छीना नहीं जा सकता है। संविधान का अनुच्छेद 300-ए ऐसे अधिकार की रक्षा करता है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 300-ए के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, इस तरह के अधिकार को छीनने की मांग करने वाले अधिनियम के प्रावधानों को सख्ती से समझा जाना चाहिए।*

(जोर दिया गया)

दिल्ली एयरटेक सर्विसेज प्रा. लिमिटेड एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य में इस न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में संपत्ति के अधिकार को बुनियादी मानव अधिकार के रूप में मान्यता दी:

"30. यह हर न्यायशास्त्र में और विभिन्न राजनीतिक विचारकों द्वारा स्वीकार किया जाता है कि संपत्ति का कुछ हिस्सा सरकार के अत्याचार और आर्थिक उत्पीड़न के खिलाफ एक अनिवार्य सुरक्षा है। जेफरसन का विचार था कि संपत्ति के समर्थन के बिना स्वतंत्रता लंबे समय तक कायम नहीं रह सकती। जॉन एडम्स की राय थी, "संपत्ति सुरक्षित होनी चाहिए, अन्यथा स्वतंत्रता कायम नहीं रह सकती।" वास्तव में यह विचार कि संपत्ति स्वयं बीज आधार है जिसे अन्य संवैधानिक मूल्यों को पनपने के लिए संरक्षित किया जाना चाहिए, राजनीतिक विचारकों और न्यायविदों के बीच आम सहमति है।

(जोर दिया गया)

जिलुभाई नानभाई खाचरव में बनाम गुजरात राज्य, इस न्यायालय ने इस प्रकार निर्णय दिया:

"48. ...दूसरे शब्दों में, अनुच्छेद 300-ए केवल राज्य की शक्तियों को सीमित करता है कि कानून के अधिकार के अलावा किसी भी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा। कानून की मंजूरी के बिना कोई भी वंचित नहीं होना चाहिए। अनुच्छेद 300-ए के तहत किसी अन्य तरीके से वंचन अधिग्रहण या कब्जा नहीं है। दूसरे शब्दों में, यदि कोई कानून नहीं है, तो कोई अभाव नहीं है।"

(जोर दिया गया)

10.3. इस मामले में, अपीलकर्ता को बिना किसी कानूनी मंजूरी के और कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना उसकी संपत्ति से जबरन बेदखल नहीं किया जा सकता था, और उसे उचित मुआवजे के भुगतान से वंचित नहीं किया जा सकता था, जो कि 1967 में जबरन बेदखली की तारीख पर एक मौलिक अधिकार था।

10.4. राज्य का यह तर्क कि अपीलकर्ता या उसके पूर्ववर्तियों ने अधिग्रहण के लिए "मौखिक रूप से" सहमति दी थी, पूरी तरह से निराधार है। हम पाते हैं कि राज्य द्वारा

अपीलकर्ता को उसकी संपत्ति से अनिवार्य रूप से वंचित करने में अधिकार और कानूनी मंजूरी का पूर्ण अभाव है।

10.5. कानून के शासन द्वारा शासित लोकतांत्रिक राजनीति में, राज्य कानून की मंजूरी के बिना किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से वंचित नहीं कर सकता था। *तुकाराम काना जोशी एवं अन्य बनाम एम.आई.डी.सी. एवं अन्य* मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया गया है, जिसमें यह माना गया कि राज्य को अधिग्रहण, मांग, या किसी अन्य अनुमेय वैधानिक मोड के लिए प्रक्रिया का पालन करना चाहिए। कानून के शासन द्वारा शासित एक कल्याणकारी राज्य होने के नाते राज्य खुद को संविधान द्वारा प्रदान की गई स्थिति से परे कोई दर्जा नहीं दे सकता है।

हरियाणा राज्य बनाम मुकेश कुमार मामले में इस न्यायालय ने कहा कि संपत्ति का अधिकार अब न केवल एक संवैधानिक या वैधानिक अधिकार माना जाता है, बल्कि एक मानव अधिकार भी माना जाता है। मानवाधिकारों को व्यक्तिगत अधिकारों जैसे आश्रय, आजीविका, स्वास्थ्य, रोजगार आदि के दायरे में माना गया है। मानवाधिकारों ने बहुआयामी आयाम प्राप्त कर लिया है।

10.6. हम उच्च न्यायालय के समक्ष राज्य द्वारा की गई दलील से आश्चर्यचकित हैं कि चूंकि वह 42 वर्षों से अधिक समय से भूमि पर लगातार कब्जे में है, इसलिए यह "प्रतिकूल" कब्जे के समान होगा। एक कल्याणकारी राज्य होने के नाते, राज्य को प्रतिकूल कब्जे की दलील देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जो एक अतिक्रमी यानी किसी अपकृत्य या यहां तक कि अपराध के दोषी व्यक्ति को 12 वर्षों से अधिक समय तक ऐसी संपत्ति पर कानूनी अधिकार हासिल करने की अनुमति देता है। राज्य को अपने ही नागरिकों की संपत्ति हड़पने के लिए प्रतिकूल कब्जे के सिद्धांत को लागू करके भूमि पर अपना अधिकार पूरा करने की अनुमति नहीं दी जा सकती, जैसा कि वर्तमान मामले में किया गया है।

10.7. अपीलकर्ता द्वारा अदालत में जाने में देरी और लापरवाही के बारे में राज्य द्वारा दिया गया तर्क भी खारिज किया जा सकता है। कार्रवाई के निरंतर कारण के मामले में, या यदि परिस्थितियाँ न्यायालय की न्यायिक अंतरात्मा को झकझोर देती हैं, तो देरी और विलंब को नहीं उठाया जा सकता है। देरी की माफ़ी न्यायिक विवेक का मामला है, जिसका प्रयोग तथ्यों और परिस्थितियों में विवेकपूर्ण और यथोचित रूप से किया जाना चाहिए। एक मामले का यह मौलिक अधिकारों के उल्लंघन, और दावा किए गए उपाय और देरी कब और कैसे हुई, इस पर निर्भर करेगा। पर्याप्त न्याय करने के लिए अपने संवैधानिक अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने के लिए अदालतों के लिए कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं है।

ऐसे मामले में जहां न्याय की मांग इतनी बाध्यकारी है, एक संवैधानिक न्यायालय न्याय को बढ़ावा देने की दृष्टि से अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करेगा, न कि उसे पराजित करने के लिए।

तुकाराम काना जोशी और अन्य बनाम एम.आई.डी.सी. और अन्य में इस न्यायालय ने एक समान तथ्य की स्थिति से निपटते हुए, इस प्रकार कहा:

> *"ऐसे अधिकारी हैं जो कहते हैं कि देरी और लापरवाही दावा प्रस्तुत करने का अधिकार समाप्त कर देती है। इनमें से अधिकांश प्राधिकार संबंध सेवा न्यायशास्त्र, दशकों पहले उनके साथ हुए गलत के लिए मुआवजा देना, वैधानिक बकाया की वसूली, शैक्षिक सुविधाओं के लिए दावा और इसी तरह के मामलों की अन्य श्रेणियों आदि से संबंधित हैं। हालांकि, यह सच है कि कुछ ऐसे हैं जो प्राधिकारी यह निर्धारित करते हैं कि संविधान के अनुच्छेद 32 या 226 के तहत देरी होती है और एक नागरिक को उपचार मांगने से रोका जाता है, भले ही उसके मौलिक अधिकार का उल्लंघन किया गया हो, मौजूदा मामला पूरी तरह से एक अलग परिदृश्य से संबंधित है। <u>राज्य के पदाधिकारियों ने बिना किसी कानून की मंजूरी के अपीलकर्ताओं की भूमि पर कब्जा कर लिया।</u> अपीलकर्ताओं ने मुआवजे का लाभ देने के लिए बार-बार अनुरोध किया था। <u>राज्य को</u>*

या तो अधिग्रहण, या मांग, या किसी अन्य अनुमेय वैधानिक मोड के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना होगा।

(जोर दिया गया)

11. वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता एक अनपढ़ व्यक्ति है, जो ग्रामीण क्षेत्र से आने वाली एक विधवा है, जिसे कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का सहारा लिए बिना राज्य द्वारा उसकी निजी संपत्ति से वंचित कर दिया गया है। अपीलकर्ता को आधी सदी से अधिक समय तक कोई भी मुआवजा दिए बिना उसकी संपत्ति का अधिकार छीन लिया गया है। वर्तमान मामले में कार्रवाई का कारण जारी है, क्योंकि अपीलकर्ता को 1967 में कानूनी मंजूरी या कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना उसकी संपत्ति से अनिवार्य रूप से ज़ब्त कर लिया गया था। वर्तमान मामला वह है जहां न्याय की मांग इतनी बाध्यकारी है क्योंकि राज्य ने स्वीकार किया है कि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू किए बिना, या कानून के लिए ज्ञात किसी भी प्रक्रिया के बिना भूमि पर कब्जा कर लिया गया था। हम संविधान के अनुच्छेद 136 और 142 के तहत अपने असाधारण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हैं। और राज्य को अपीलकर्ता को मुआवजा देने का निर्देश दें।

12. राज्य ने प्रस्तुत किया है कि 2008 में उसने निकटवर्ती भूमि मालिक श्री अनख सिंह के मामले में अर्थात 2004 के सी.डब्ल्यू.पी.नं.1192 में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए एक निर्देश के अनुसार अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू की थी। । राज्य ने केवल उस मामले में अधिग्रहण शुरू किया जहां निर्देश उच्च न्यायालय द्वारा जारी किए गए थे, न कि अन्य भूमि मालिकों के मामले में जिनकी भूमि अनिवार्य रूप से ली गई थी। एक ही उद्देश्य के लिए और एक ही समय पर। परिणामस्वरूप, वर्तमान भूमि मालिक को निवारण के लिए अपने व्यक्तिगत मामलों में न्यायालय का रुख करने के लिए प्रेरित किया गया है।

13. वर्तमान मामले के उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों के मद्देनजर, प्रतिवादी-राज्य को उन्हीं शर्तों पर मुआवजा देने का निर्देश दिया जाता है, जैसा कि संदर्भ न्यायालय ने *अनख*

सिंह के मामले में दिनांक 07.07.2015 के आदेश के तहत दिया था (अर्थात भूमि संदर्भ संख्या 1 ऑफ 2011 आरबीटी नंबर 01/13) को 8 सप्ताह की अवधि के भीतर सोलेटियम, ब्याज आदि सहित सभी वैधानिक लाभों के साथ, इसे डीम्ड अधिग्रहण का मामला मानते हुए। राज्य को 10 सप्ताह के भीतर इस न्यायालय के समक्ष अनुपालन का एक शपथ पत्र दाखिल करने का निर्देश दिया गया है।

यह सूचित किया गया है कि रविंदर सिंह पुत्र अनख सिंह और अन्य द्वारा एक अपील 2016 का आरएफए नंबर 35 दायर की गई है जो शिमला में हिमाचल प्रदेश के उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित है।

इसे ध्यान में रखते हुए, यदि वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा राज्य द्वारा मुआवजे के भुगतान की तारीख से 8 सप्ताह के भीतर अपील दायर की जाती है, तो अपील को सीमा के भीतर माना जाएगा, और कानून के अनुसार अपने गुणों के आधार पर निर्णय लिया जाएगा।

प्रतिवादी-राज्य को वर्तमान अपीलकर्ता को 1,00,000/- रुपये की कानूनी लागत और खर्च का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है।

14. तदनुसार अपीलें स्वीकार की जाती हैं। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 11.09.2013 और 13.05.2014 को रद्द किया जाता है। तदनुसार आदेश दिया गया।

दिव्या पांडे अपील स्वीकार की गई।

आशीष तिवारी द्वारा अनुवादित।